फोकस

■ - राजेश कुमरावत 'सार्थक'

जब अहंकार झुका और समरसता जीती

भारतीय समाज की संत परंपरा केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने समय-समय पर सामाजिक विकृतियों को भी चुनौती दी है। इसी परंपरा में संत रविदास का जीवन और विचार समाज को जोड़ने वाली एक सशक्त धारा के रूप में सामने आते हैं।

लोक परंपरा में वर्णित एक प्रसंग के अनुसार, काशी में एक विद्वान व्यक्ति ने संत रविदास के साथ बैठकर भोजन करने से इंकार कर दिया। कारण वही–जातिगत भेदभाव और सामाजिक दूरी। परंतु समय के साथ जब उसने संत रविदास के जीवन की सादगी, भक्ति और निर्मलता को निकट से अनुभव किया, तो उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन आया। अंततः वही व्यक्ति उनके सत्संग में बैठकर ज्ञान ग्रहण करने लगा।

यह प्रसंग भले ही लोक परंपरा में वर्णित हो, परंतु इसका संदेश अत्यंत गहरा और यथार्थपूर्ण है। यह बताता है कि समाज में वास्तविक परिवर्तन बाहरी दबाव या व्यवस्था से नहीं, बल्कि अंतर्मन की जागृति से आता है।संत रविदास ने उस युग में जो कहा, वह आज भी उतना ही सत्य है–कि मनुष्य की श्रेष्ठता उसके जन्म में नहीं, बल्कि उसके कर्म, आचरण और विचारों में निहित होती है। उन्होंने स्पष्ट किया कि जब तक मन में भेदभाव है, तब तक बाहरी समानता के प्रयास अधूरे ही रहेंगे।

आज के संदर्भ में यह विचार और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। वर्तमान समय में, जब समाज को विभिन्न आधारों पर बांटने की प्रवृत्तियां दिखाई देती हैं, तब यह प्रश्न उठता है कि क्या केवल कानून और नीतियां समाज में एकता ला सकती हैं?उत्तर स्पष्ट है–नहीं।जब तक व्यक्ति के भीतर समरसता की भावना नहीं जागेगी, तब तक कोई भी बाहरी व्यवस्था स्थायी परिवर्तन नहीं ला सकती।

संत रविदास का यह संदेश आज हमें स्पष्ट दिशा देता है-

पहली दिशा-स्वयं में परिवर्तनः

हर व्यक्ति को अपने भीतर झांककर यह देखना होगा कि कहीं उसके मन में भी किसी प्रकार का भेदभाव तो नहीं है। परिवर्तन की शुरुआत स्वयं से ही होती है।

दूसरी दिशा–संवाद और समरसता का विस्तारः

> "यह प्रसंग भले ही लोक परंपरा में वर्णित हो, परंतु इसका संदेश अत्यंत गहरा और यथार्थपूर्ण है। यह बताता है कि समाज में वास्तविक परिवर्तन बाहरी दबाव या व्यवस्था से नहीं, बल्कि अंतर्मन की जागृति से आता है।संत रविदास ने उस युग में जो कहा, वह आज भी उतना ही सत्य है–कि मनुष्य की श्रेष्ठता उसके जन्म में नहीं, बल्कि उसके कर्म, आचरण और विचारों में निहित होती है। उन्होंने स्पष्ट किया कि जब तक मन में भेदभाव है, तब तक बाहरी समानता के प्रयास अधूरे ही रहेंगे। आज के संदर्भ में यह विचार और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। वर्तमान समय में, जब समाज को विभिन्न आधारों पर बांटने की प्रवृत्तियां दिखाई देती हैं, तब यह प्रश्न उठता है कि क्या केवल कानून और नीतियां समाज में एकता ला सकती है?"

समाज में संवाद की परंपरा को मजबूत करना होगा। संतों ने सत्संग के माध्यम से समाज को जोड़ा, आज हमें उसी भावना को आधुनिक संदर्भ में अपनाना होगा।

तीसरी दिशा–युवा पीढ़ी का मार्गदर्शनः

आज के युवाओं को यह समझाना आवश्यक है कि समाज की शक्ति उसकी एकता में निहित है, न कि विभाजन में। यदि युवा इस विचार को अपनाते हैं, तो भविष्य स्वतः सशक्त होगा।यह प्रसंग हमें यह भी सिखाता है कि समाज में परिवर्तन के लिए बड़े आंदोलन की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि एक सच्चा विचार और उसका ईमानदार आचरण ही पर्याप्त होता है।

संत रविदास ने अपने जीवन से यह सिद्ध किया कि यदि व्यक्ति स्वयं बदल जाए, तो समाज भी बदल सकता है।आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इस संदेश को केवल एक कथा के रूप में न देखें, बल्कि इसे अपने जीवन और समाज में उतारें। तभी हम एक समरस, सशक्त और जागरूक समाज का निर्माण कर सकेंगे। सार्थक चिंतनः समाज को बदलने के लिए कानून नहीं, बल्कि मन की चेतना बदलनी होती है। जब अहंकार झुकता है, तभी समरसता जन्म लेती है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार, शिक्षाविद एवं सामाजिक चिंतक, समसामयिक विषयों के विश्लेषक।)

जब अहंकार झुका और समरसता जीती संत रविदास की काशी से मिली दिशा

एक प्रसंग, जो बताता है–परिवर्तन कानून से नहीं, चेतना से आता है

पहली कड़ी में प्रस्तुत विचारों को मिले व्यापक पाठकीय प्रतिसाद के पश्चात, प्रस्तुत है 650वीं जयंती वर्ष पर संत रविदासजी विशेष श्रृंखला की दूसरी कड़ी:-

भारतीय समाज की संत परंपरा केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने समय-समय पर सामाजिक विकृतियों को भी चुनौती दी है। इसी परंपरा में संत रविदास का जीवन और विचार समाज को जोड़ने वाली एक सशक्त धारा के रूप में सामने आते हैं।

लेखक
राजेश कुमरावत 'सार्थक'

लोक परंपरा में वर्णित एक प्रसंग के अनुसार, काशी में एक विद्वान व्यक्ति ने संत रविदास के साथ बैठकर भोजन करने से इंकार कर दिया। कारण वही–जातिगत भेदभाव और सामाजिक दूरी। परंतु समय के साथ जब उसने संत रविदास के जीवन की सादगी, भक्ति और निर्मलता को निकट से अनुभव किया, तो उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन आया। अंततः वही व्यक्ति उनके सत्संग में बैठकर ज्ञान ग्रहण करने लगा।

यह प्रसंग भले ही लोक परंपरा में वर्णित हो, परंतु इसका संदेश अत्यंत गहरा और यथार्थपूर्ण है। यह बताता है कि समाज में वास्तविक परिवर्तन बाहरी दबाव या व्यवस्था से नहीं, बल्कि अंतर्मन की जागृति से आता है।

संत रविदास ने उस युग में जो कहा, वह आज भी उतना ही सत्य है–कि मनुष्य की श्रेष्ठता उसके जन्म में नहीं, बल्कि उसके कर्म, आचरण और विचारों में निहित होती है। उन्होंने स्पष्ट किया कि जब तक मन में भेदभाव है, तब तक बाहरी समानता के प्रयास अधूरे ही रहेंगे।

आज के संदर्भ में यह विचार और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। वर्तमान समय में, जब समाज को विभिन्न आधारों पर बांटने की प्रवृत्तियां दिखाई देती हैं, तब यह प्रश्न उठता है कि क्या केवल कानून और नीतियां समाज में एकता ला सकती हैं?

उत्तर स्पष्ट है–नहीं।

जब तक व्यक्ति के भीतर समरसता की भावना नहीं जागेगी, तब तक कोई भी बाहरी व्यवस्था स्थायी परिवर्तन नहीं ला सकती।

संत रविदास का यह संदेश आज हमें स्पष्ट दिशा देता है– पहली दिशा– स्वयं में परिवर्तन-

हर व्यक्ति को अपने भीतर झांककर यह देखना होगा कि कहीं उसके मन में भी किसी प्रकार का भेदभाव तो नहीं है। परिवर्तन की शुरुआत स्वयं से ही होती है।

दूसरी दिशा–संवाद और समरसता का विस्तार:-

समाज में संवाद की परंपरा को मजबूत करना होगा। संतों ने सत्संग के माध्यम से समाज को जोड़ा, आज हमें उसी भावना को आधुनिक संदर्भ में अपनाना होगा।

तीसरी दिशा–युवा पीढ़ी का मार्गदर्शन:- आज के युवाओं को यह समझाना आवश्यक है कि समाज की शक्ति उसकी एकता में निहित है, न कि विभाजन में। यदि युवा इस विचार को अपनाते हैं, तो भविष्य स्वतः सशक्त होगा।

यह प्रसंग हमें यह भी सिखाता है कि समाज में परिवर्तन के लिए बड़े आंदोलन की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि एक सच्चा विचार और उसका ईमानदार आचरण ही पर्याप्त होता है।

संत रविदास ने अपने जीवन से यह सिद्ध किया कि यदि व्यक्ति स्वयं बदल जाए, तो समाज भी बदल सकता है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इस संदेश को केवल एक कथा के रूप में न देखें, बल्कि इसे अपने जीवन और समाज में उतारें। तभी हम एक समरस, सशक्त और जागरूक समाज का निर्माण कर सकेंगे।

सार्थक चिंतन:- समाज को बदलने के लिए कानून नहीं, बल्कि मन की चेतना बदलनी होती है। जब अहंकार झुकता है, तभी समरसता जन्म लेती है।

– क्रमशः (अगली कड़ी में:- जाति से ऊपर उठकर समाज निर्माण की संत परंपरा)

- लेखक वरिष्ठ पत्रकार, शिक्षाविद एवं सामाजिक चिंतक, समसामयिक विषयों के विश्लेषक।

page26-6.pdf
indoresamachar.net

जब अहंकार झुका और समरसता जीती: संत रविदास को काशी से मिली दिशा

▶ एक प्रसंग, जो बताता है—परिवर्तन कानून से नहीं, चेतना से आता है ▶ विशेष लेख श्रृंखला 650वीं जयंती वर्ष पर संत रविदासजी विशेष

'पहली कड़ी में प्रस्तुत विचारों को मिले व्यापक पाठकीय प्रतिसाद के पश्चात, प्रस्तुत है 650वीं जयंती वर्ष पर संत रविदासजी विशेष श्रृंखला की दूसरी कड़ी...

भारतीय समाज की संत परंपरा केवल आध्यात्मिक मार्गदर्शन तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने समय-समय पर सामाजिक विकृतियों को भी चुनौती दी है। इसी परंपरा में संत रविदास का जीवन और विचार समाज को जोड़ने वाली एक सशक्त धारा के रूप में सामने आते हैं। लोक परंपरा में वर्णित एक प्रसंग के अनुसार, काशी में एक विद्वान व्यक्ति ने संत रविदास के साथ बैठकर भोजन करने से इंकार कर दिया। कारण वही–जातिगत भेदभाव और सामाजिक दूरी। परंतु समय के साथ जब उसने संत रविदास के जीवन की सादगी, भक्ति और निर्मलता को निकट से अनुभव किया, तो उसके दृष्टिकोण में परिवर्तन आया। अंततः वही व्यक्ति उनके सत्संग में बैठकर ज्ञान ग्रहण करने लगा। यह प्रसंग भले ही लोक परंपरा में वर्णित हो, परंतु इसका संदेश अत्यंत गहरा और यथार्थपूर्ण है। यह बताता है कि समाज में वास्तविक परिवर्तन बाहरी दबाव या व्यवस्था से नहीं, बल्कि अंतर्मन की जागृति से आता है। संत रविदास ने उस युग में जो कहा, वह आज भी उतना ही सत्य है–कि मनुष्य की श्रेष्ठता उसके जन्म में नहीं, बल्कि उसके कर्म, आचरण और विचारों में निहित होती है। उन्होंने स्पष्ट किया कि जब तक मन में भेदभाव है, तब तक बाहरी समानता के प्रयास अधूरे ही रहेंगे।

आज के संदर्भ में यह विचार और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। वर्तमान समय में, जब समाज को विभिन्न आधारों पर बांटने की प्रवृत्तियां दिखाई देती हैं, तब यह प्रश्न उठता है कि क्या केवल कानून और नीतियां समाज में एकता ला सकती हैं? उत्तर स्पष्ट है–नहीं। जब तक व्यक्ति के भीतर समरसता की भावना नहीं जागेगी, तब तक कोई भी बाहरी व्यवस्था स्थायी परिवर्तन नहीं ला सकती। संत रविदास का यह संदेश आज हमें स्पष्ट दिशा देता है–

पहली दिशा—स्वयं में परिवर्तन:-हर व्यक्ति को अपने भीतर झांककर यह देखना होगा कि कहीं उसके मन में भी किसी प्रकार का भेदभाव तो नहीं है। परिवर्तन की शुरुआत स्वयं से ही होती है।

दूसरी दिशा—संवाद और समरसता का विस्तार:-समाज में संवाद की परंपरा को मजबूत करना होगा। संतों ने सत्संग के माध्यम से समाज को जोड़ा, आज हमें उसी भावना को आधुनिक संदर्भ में अपनाना होगा।

तीसरी दिशा—युवा पीढ़ी का मार्गदर्शन:-आज के युवाओं को यह समझाना आवश्यक है कि समाज की शक्ति उसकी एकता में निहित है, न कि विभाजन में। यदि युवा इस विचार को अपनाते हैं, तो भविष्य स्वतः सशक्त होगा।

यह प्रसंग हमें यह भी सिखाता है कि समाज में परिवर्तन के लिए बड़े आंदोलन की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि एक सच्चा विचार और उसका ईमानदार आचरण ही पर्याप्त होता है। संत रविदास ने अपने जीवन से यह सिद्ध किया कि यदि व्यक्ति स्वयं बदल जाए, तो समाज भी बदल सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हम इस संदेश को केवल एक कथा के रूप में न देखें, बल्कि इसे अपने जीवन और समाज में उतारें। तभी हम एक समरस, सशक्त और जागरूक समाज का निर्माण कर सकेंगे। सार्थक चिंतनः समाज को बदलने के लिए कानून नहीं, बल्कि मन की चेतना बदलनी होती है। जब अहंकार झुकता है, तभी समरसता जन्म लेती है।

क्रमशः (अगली कड़ी में: जाति से ऊपर उठकर समाज निर्माण की संत परंपरा)

लेखक: राजेश कुमरावत 'सार्थक'
लेखक वरिष्ठ पत्रकार, शिक्षाविद एवं सामाजिक चिंतक, समसामयिक विषयों के विश्लेषक।